भारत और वैश्विक वित्तीय संकट: पुन: उबरने से विकास की ओर *

- दुव्वुरी सुब्बाराव

2007-08 तक पाँच वर्षों में भारत ने 9 प्रतिशत वार्षिक की औसत वृद्धि दर प्राप्त की। वृद्धि की इस दर को इस वित्तीय संकट ने बाधित किया, जिसका आरंभ में हमने जितना सोचा था उससे अधिक असर भारत पर पड़ा था लेकिन यह असर अन्य अधिकांश देशों की तुलना में कम था । 2008-09 में एक तिमाही के लिए वृद्धि की दर 6 प्रतिशत से नीचे चले जाने के बावजूद पूरे वर्ष के लिए वह 6.7 प्रतिशत पर सुदृढ़ बनी रही। वर्तमान अनुमान यह है कि अभी समाप्त हुए राजकोषीय वर्ष 2009-10 के लिए अर्थव्यवस्था में 7.2 और 7.5 प्रतिशत के बीच में वृद्धि हुई है और 2010-11 के लिए वृद्धि दर 8 + प्रतिशत होगी। संकटकालीन अवधि की अनिश्चितता और चिंताओं के बाद भावना बदली है और बहुधा पूछा जाने वाला प्रश्न फिर पूछा जाने लगा है कि भारत कब दोहरे अंक वाली वृद्धि दर को प्राप्त करेगा?

2. नीति निर्माताओं के लिए बहुधा पूछा जाने वाला प्रश्न तीन सूक्ष्म उप -प्रश्नों में विभाजित है:

(i) अल्पावधि में हम मूल्य स्थिरता को बनाये रखते हुए अर्थव्यवस्था में वृद्धि दर की प्रवृत्ति को कैसे पुनः प्रतिष्ठित कर सकते हैं?

(ii) मध्यम अवधि में हम वित्तीय स्थिरता के साथ बिना समझौता किये वृद्धि दर की प्रवृत्ति को कैसे बढ़ा सकते हैं?

(iii) हम यह कैसे सुनिश्चित करते हैं कि वृद्धि समावेशी प्रकृति की हैं?

3. भारत का इतना अधिक विश्लेषण किया जा चुका है कि अब मौलिक रूप से बात कहना कठिन है। और इन तीनों प्रश्नों के उत्तर सर्वविदित हैं, और उनमें बहुत सारे संरचनात्मक और अभिशासनात्मक सुधार करते हुए आगे बढ़ने की बात निहित है। पीटरसन इंस्टीट्यूट के इस मंच का इस्तेमाल करते हुए मैं सुधार कार्यक्रम के कुछ ऐसे मुद्दों पर टिप्पणी करना चाहता हूँ जो रिज़र्व बैंक से सम्बद्ध हैं।

* पीटरसन इंस्टिट्यूट फॉर इन्टरनेशनल इकॉनॉमिक्स, वाशिंग्टन डीसी में 26 अप्रैल 2010 को दुव्वुरी सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक की टिप्पणी।

पूंजी प्रवाह

4. अस्थिर पूंजी प्रवाह संकट के दौरान केंद्रीय मुद्दा रहा है और अब भी है क्योंकि संकट अब घट रहा है। उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं (ईएमई) में वैश्विक उत्तोलनों के समाप्त होने के परिणामस्वरूप संकट में दौरान पूंजी प्रवाह आकस्मिक रूप से बंद हुए और परावर्तन का सामना करना पड़ा। अब यह प्रवृत्ति एक बार पुनः परिवर्त्तित हुई है और अनेक उभरती बाज़ार अर्थव्यव्सथाएं पूंजी के विशुद्ध अन्तर्प्रवाह को आकर्षित कर रही हैं क्योंकि वैश्विक व्यवस्था नकदी से आप्लावित है, विकसित अर्थव्यवस्थाओं में एक बढ़ी हुई अवधि तक निम्न ब्याज दरों का आश्वासन है और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में जोरदार वृद्धि की संभावना है। वह परिचित प्रश्न कि उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाएं कैसे लाभों को अधिकतम और अस्थिर नकदी प्रवाहों की लागतों को न्यूनतम करें पुनः नीतिगत कार्यक्रम के सामने आ खड़ा हुआ है।

5. नकदी प्रवाहों का अल्प ज्ञात पहलू जिसे संभवतः नकदी प्रवाहों का नियम कहा जा सकता है, वह यह है कि वे कभी सुनिश्चित समय पर या जितनी सुनिश्चित मात्रा में आप उन्हें चाहते हो, नहीं आते। इन प्रवाहों का, विशेष रूप से यदि वे अस्थिर हैं तो प्रबंध कैसे किया जाये इसी में अर्ध-खुली उभरती अर्थव्यवस्थाओं की केंद्रीय बैंक नीतियों की प्रभावोत्पादकता की परीक्षा होगी। यदि केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप नहीं करते तो उन्हें आधारभूत सिद्धान्तों से असम्बद्ध मुद्रा वृद्धि की लागत को वहन करना पड़ता है। यदि वे मुद्रा वृद्धि को रोकने के लिए विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप करते हैं तो उनके पास अतिरिक्त प्रणालीगत नकदी होगी और उन्हें संभावित मुद्रास्फीतिगत दबावों का सामना करना पड़ेगा। यदि वे इसके परिणामस्वरूप जन्मी नकदी को अप्रभावी बनाते हैं तो वे ब्याज दरों को बढ़ाने का खतरा उठाते हैं जिसका विकास की संभावनाओं पर असर पड़ेगा। नकदी प्रवाह वित्तीय स्थिरता को भी संभावित रूप से क्षति पहुँचा सकता है। उभरती अर्थव्यवस्थाएं तीन असंभावित त्रयी का, अर्थात एक खुले पूंजी खाते को रखने की असंभाव्यता, एक स्थिर विनिमय दर और आत्मनिर्भर मौद्रिक नीति का प्रबंध करते हैं - यह विकास, मूल्य स्थिरता और वित्तीय स्थिरता की उनकी संभावनाओं पर असर डालने वाला है।

6. भारत ने पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता पर सामान्य रूप से और पूंजीगत लेखा प्रबंध पर विशेष रूप से एक सुसंगत नीति का पालन किया है। हमारा दृष्टिकोण यह है कि पूंजीगत लेखा परिवर्तनीयता अलग से कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि वह उच्चतर और स्थिर वृद्धि के लिए एक साधन है, हमारी धारणा है कि हमारी अर्थव्यवस्था पूंजीगत परिवर्तनीयता की ओर एक क्रमिक पथ पर बढ़े और इस पथ का भी घरेलू और वैश्विक स्तर पर हो रहे परिवर्तनों के प्रत्युत्तर में एक गतिशील आधार पर पुनः पुन जायजा लिया जाना चाहिए। संकट के बाद वह हमारी नीति बनी हुई है। हम अपने पूंजीगत खाते के उदारीकरण की दिशा में बढ़ना जारी रखेंगे पर हम संकट से मिली सीख को देखते हुए भावी पथ को समय-समय पर जाँचते रहेंगे।

7. नकदी प्रवाहों के प्रबंधन की दिशा में भारत का दृष्टिकोण भी व्यावहारिक, पारदर्शी और संघर्षपूर्ण रहा है। अल्पावधि प्रवाहों की जगह हमारी प्राथमिकता दीर्घावधि प्रवाह और ऋण-प्रवाहों की जगह गैर-ऋण प्रवाह हैं। इसके लिए तर्क स्वतः प्रामाणित है। इक्विटी-प्रवाहों पर हमारी नीति काफी उदार है तथा अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं के विपरीत - जिनमें कि उदारीकरण हुआ और जब निधियों के आगमन अस्थिर होने लगे तो उन्होंने उदारीकरण की प्रक्रिया को उलट दिया, हमारी नीति काफी स्थिर रही है। ऐतिहासिक रूप से हमने नीतिगत उत्तोलनों को प्रवाहों के ऋण पक्ष की ओर इस्तेमाल किया है ताकि अस्थिरता से निपटा जा सके। संकट से पहले के वर्षों में जब अर्थव्यवस्था की आत्मसात करने की क्षमता से कहीं अधिक उनमें निधियों का आगमन

हो रहा था जब उससे निपटने का यह हमारा आधार रहा था। संकट के दौरान जब हमने निधियों का बड़ी मात्रा में बहिर्गमन होते देखा तब यह हमारी नीति थी। और मैं यह मानता हूँ आने वाले समय में भी यही हमारी नीति रहेगी।

8. अभी जबकि हम संकट से पूरी तरह बाहर नहीं निकले हैं, कुछ उभरती अर्थव्यवस्थाओं में नकदी आगमन में हुई वृद्धि से फिर वही परिचित प्रश्न उभरा है - नकदी आगमनों पर टोबिन किस्म का कर लगाने की उपयुक्तता। संकट के पहले और बाद में ऐसे देशों के उदाहरण हैं - प्रमुखतः चिले, कोलम्बिया, ब्राजील और मलेशिया जिन्होंने टोबिन कर या उसकी विविधताओं के साथ प्रयोग किये हैं। हालांकि किसी देश के अनुभव से सीखने को कुछ सबक हैं पर कुल मिलाकर जानकारी इतनी पर्याप्त नहीं है कि किन्हीं सुनिश्चित निष्कर्षों की ओर आने में मदद मिले।

9. टोबिन कर के आलोचकों का मानना है कि यह कर अप्रभावी है, इसे कार्यान्वित करना कठिन है, इससे आसानी से बचा जा सकता है और जो इससे संभावित लाभ हैं उनके मुकाबले इसकी लागत बहुत अधिक है और यह सब इसलिए कि वित्तीय बाजार हमेशा नीति निर्माताओं से ज्यादा चतुर होते हैं। कर के समर्थक कहते हैं कि यदि कर को अच्छी तरह से अभिकल्पित और कार्यान्वित किया जाये तो कर पूंजी प्रवाहों को सुगम बनाने में प्रभावी हो सकता है और नियंत्रणों से बच निकलना आसान विकल्प नहीं है क्योंकि बच निकलने के प्रयासों में निधियों को देश में लाने और देश से बाहर ले जाने की अतिरिक्त लागत भी वहन करनी होगी और कर यही तो हासिल करना चाहता है।

10. भारत में नीति पर समग्र रूप से जोर देने के चलते हमें विभिन्न उपकरणों के चुनाव के बारे में पता नहीं होता। बंधा बंधाया दृष्टिकोण यह है कि हम मूल्य आधारित नियंत्राणों की बजाय मात्रा आधारित नियंत्राणों को प्राथमिकता देते हैं। हमारी नीति की एक आलोचनात्मक जाँच यह दर्शाती है कि यह दृष्टिकोण गलत है। उदाहरण के लिए बांडों पर विदेशी उनमें कितना निवेश करें हम इसकी भी सीमा निर्धारित करते हैं और साथ ही कर को भी रोके रखते हैं। इसी प्रकार, बाह्य वाणिज्यिक उधारों पर हमारी नीति मूल्य और गुणवत्ता वैविध्य दोनों का प्रयोग करती है। हमने अब तक टोबिन किस्म के कर नहीं लगाये हैं और इस बारे में सोच भी नहीं रहे हैं। तथापि, इस बार पर जोर देने की आवश्यकता है कि कोई भी नीतिगत उपकरण संबंधी हमारा चुनाव संदर्भ के अनुसार होगा।

11. हाल के संकट से स्पष्टतः पूंजी नियंत्राण के बारे में वैश्विक दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है। 90 के दशक के मध्य में आये एशियाई संकट ने पूर्णतः खुले पूंजीगत लेखे में निहित अस्थिरता के जोखिम को प्रदर्शित किया था। उसके बावजूद बौद्धिक रुढ़िवादी सोच मुद्रा प्रवाहों पर नियंत्रण की यह कहकर आलोचना करता रहा कि वह अकुशल और अप्रभावी है। हाल के संकट ने यह दर्शाया है कि पूंजीगत लेखे में जिस हद तक खुलापन होगा उस हद तक संकट का प्रतिकूल प्रभाव भी पड़ेगा। निश्चय ही इसे खुले पूंजीगत लेखे की आलोचना न समझा जाये, लेकिन इस सिद्धान्त का एक सशक्त प्रदर्शन यह दर्शाता है कि परिपक्वता से पहले खुलापन मदद करने के बजाय क्षति पहुँचाता है।

12. उल्लेखनीय है कि अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने फरवरी 2010 में एक नीतिगत नोट[1] प्रकाशित किया था जिसमें उसकी लंबे समय से चली आ रही रूढ़िवादिता को उलट दिया गया। नोट में किन्ही *''परिस्थितियों का उल्लेख किया गया जिनमें पूंजी प्रवाहों में हुई वृद्धि के प्रति पूंजी नियंत्रण को नीतिगत प्रत्युत्तर का वैधानिक घटक माना गया।''* अब चूंकि इस पर सहमति है कि चुनी हुई परिस्थितियों में पूंजी प्रवाहों के प्रबंध में नियंत्रण *''वांछित और प्रभावी''* हो सकते हैं, तो अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष और अन्य

[1] ओस्ट्री, जॉनाथन डी. और अन्य (2010), ''कैपिटल इनफ्लॉज: दि रोल ऑफ कंट्रोल्स'' आइएमएफ स्टाफ पोजिशन नोट, एसपीएन/10/04, 19 फरवरी 2010 ।

भारत के बाह्य क्षेत्र की प्रवृत्ति				
	2006/07	2007/08	2008/09	2009/10
सीएडी (जीडीपी का%)	1.0	1.3	2.4	2.5
निवल पूंजी प्रवाह (जीडीपी का %)	4.8	8.7	0.6	3.8
सीएडी के अतिरिक्त पूंजी प्रवाह (बिलि.अम.डॉ.)	36	92	(-) 20	14
वर्ष के दौरान अम. डॉ. की तुलना में रुपए के मूल्य में वृद्धि (+) कमी (-)	2.3	9.0	(-) 21.5	12.9

टिप्पणी: 2009-10 के आंकड़े मोटे अनुमान हैं।

अंतरराष्ट्रीय निकायों को इस बात के शोध अध्ययन करने चाहिए कि किस तरह के नियंत्रण उचित हैं और किन परिस्थितियों में ताकि उभरती अर्थव्यवस्थाएं अपने नीतिगत गठन के समय उपयोगी दिशा निर्देश पा सकें।

विनिमय दर प्रबंधन

13. पूंजी अन्तर्वाहों की तरह विनिमय दर पर भी हमारी नीति सुसंगत रही है और इसीलिए हम विनिमय दर के लिए किसी विशिष्ट दर या स्तर को लक्ष्य नहीं बनाते। रिज़र्व बैंक व्यापार और निवेश के लिए हानिकारक अस्थिरता को कम करने के लिए ही बाजार में हस्तक्षेप करता है। विनिमय दर के संबंध में अस्थिरता केन्द्रित दृष्टिकोण भी अस्थिरता के स्रोत, अर्थात, पूंजी अन्तर्वाहों से जन्मा है। पूरी तरह खुले पूंजीगत लेखे के न होने के बावजूद हमने पूंजी अन्तर्वाहों में वृहद अस्थिरताओं को अनुभव किया है, जिसे कि 2009-10 तक के चार वर्षों के विदेशी क्षेत्रा के आंकड़े दर्शाते हैं।

14. उपरोक्त आंकड़े दर्शाते हैं कि भारत में जब वृद्धि की धूम थी, संकट से पहले के वर्षों में पूंजी अन्तर्वाह चालू खाता घाटे से अधिक थे और 2008-09 के संकट के वर्षों में उनमें आकस्मिक प्रत्यावर्तन हुआ। हाल में समाप्त हुए राजकोषीय वर्ष 2009-10 के लिए भुगतान संतुलन की पूरी जानकारी अभी उपलब्ध नहीं है लेकिन अद्यतन आंकड़े यह बताते हैं कि आरक्षित निधियों में निवल अभिवृद्धि अधिक नहीं थी।

15. उपरोक्त संख्याएं और प्रवृत्तियाँ हमारे नीतिगत रुख को प्रदर्शित करती हैं। पहले तो दो तरफा गतिशीलता दर्शाती है कि हमारी विमिमय दर लचीली है और वह इस बात का भी प्रमाण है कि अन्तर्वाहों के आकार की तुलना में समय के साथ-साथ दर में लचीलापन भी बढ़ता गया है।

16. दूसरे, भारत की यह सायास रणनीति नहीं है कि 'स्व-बीमा' के लिए आरक्षित निधियाँ निर्मित की जाएं। हमारी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियों में वैविध्य हमारी विनिमय दर नीति से जन्मा है जो कि केवल विनिमय दर अस्थिरता को कम करने और समष्टि आर्थिक स्थिरता में विघटनों को रोकने के लिए ही बाजार में हस्तक्षेप करती है। तीसरे, पूंजी अन्तर्वाहों के कारण इन वर्षों में जो हमारी आरक्षित निधियाँ निर्मित हुई है, उन्हीं आरक्षित निधियों का पूंजी उत्क्रमणों के समय अस्थिरता की रोकथाम के लिए उपयोग किया गया है, महत्वपूर्ण यह है कि हमारे निरन्तर व्यापार और चालू खाता घाटों के चलते हमारी विदेशी मुद्रा आरक्षित निधियाँ उधार ली गयी निधियाँ से बनी हैं, जो कि व्यापार और चालू खाता अधिशेषों के मार्फत जमा हुई आरक्षित निधियों से गुणात्मक रूप से अलग हैं। इस तरह यह स्पष्ट है कि आरक्षित निधियों ने हमें बाह्य क्षेत्र की भेद्यताओं से बेहतर तरीके से निपटने में मदद दी है।

17. ऐसा नहीं कि हमें अपनी समुचित लचीली विनिमय दर नीति की कीमत अदा नहीं करनी पड़ी है। यह महत्वपूर्ण है कि चूंकि भारत में मुद्रास्फीति प्रातिनिधिक रूप से हाल के वर्षों में हमारे व्यापार-साझेदारों से कहीं अधिक रही है, वास्तविक प्रभावी विनिमय दर सामान्य दर से बहुत अधिक रही है। इसका हमारी विदेशी प्रतिस्पर्धा क्षमता पर असर पड़ा है, वह भी ऐसे समय में जबकि विश्व व्यापार संरक्षणवाद से संबंधित चिन्ताओं के बीच पुनः संभल रहा है। साथ ही, यदि हमारे पास एक लचीली विनिमय दर है और दूसरे देश जो हमारे व्यापार-साझेदार हैं या जो उन्हीं निर्यात बाजारों के लिए स्थिर विनिमय दर पर स्पर्धा करते हैं तो हमारे लिए यह अलाभकारी होता है।

मुद्रास्फीति लक्ष्य

18. रिज़र्व बैंक विशुद्ध रूप से मुद्रास्फीति लक्ष्य को नहीं साधता। कुछ लोगों का सुझाव है कि यदि रिज़र्व बैंक विशुद्ध रूप से मुद्रास्फीति लक्ष्य का संधान करने लगे तो अर्थव्यवस्था की सेवा बेहतर हो सकेगी। तर्क यह है कि भारत जैसे देश में जहाँ लाखों-करोड़ों लोग निर्धन हैं, वहाँ मुद्रास्फीति अधिक कष्टप्रद है और यदि रिज़र्व बैंक पर कुछ दूसरे उद्देश्यों का भार न हो तो वह मुद्रास्फीति का अधिक प्रभावशाली ढंग से सामना कर सकेगा। इस तर्क पर मत वैभिन्य हो सकता है।

19. मुद्रास्फीति के लक्ष्य संधान को, जिसकी विशेषता एकल लक्ष्य (मूल्य स्थिरता) और एकल उपकरण (अल्पावधि नीति ब्याज दर) होता है, प्रतिष्ठित अकादमिक विश्वसनीयता प्राप्त है। संपूर्ण रूप से मुद्रास्फीति के प्रति प्रतिबद्धता से परिचालनात्मक प्रभावोत्पादकता बढ़ती है और वह जवाबदेही को भी लागू करता है। अनेक विकसित अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों को संकट से पहले के वर्षों में मूल्य स्थिरता को बनाये रखने में मिली सफलता ने भी इसे एक बौद्धिक विश्वसनीयता दी है। तथापि, संकट की अवधि में 'असाधारण नियंत्रण' की गुत्थी ने मुद्रास्फीति संधान के न्यूनतम सूत्र पर सहमति को यदि समाप्त नहीं तो काफी क्षीण कर दिया है। संकट ने दर्शाया है कि मूल्य स्थिरता आवश्यक नहीं कि वित्तीय स्थिरता को भी सुनिश्चित करती हो। सच तो यह है कि इस पर अधिक आग्रह है कि मूल्य स्थिरता और वित्तीय स्थिरता के बीच कोई सीधा तालमेल नहीं है और जो केन्द्रीय बैंक मूल्य स्थिरता को लाने में जितना सफल रहा है, यह संभव है कि वह वित्तीय स्थिरता को उतना ही संकट में डाल दे।

20. भारत में कई कारणों से मुद्रास्फीति संधान न तो वांछनीय है और न ही व्यवहारिकः

- प्रथम, वह अकल्पनीय है कि भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्था में केन्द्रीय बैंक बृहद विकास परिप्रेक्ष्य को भूलकर एकल लक्ष्य को ही साधने लगे। रिज़र्व बैंक को एक साथ मूल्य स्थिरता, वित्तीय स्थिरता और विकास के उद्देश्यों से निर्देशित होना है।
- दूसरे, खाद्य मदें, जिनका कि विभिन्न उपभोक्ता मूल्य सूचकांकों में बृद्ध भार (46-70 प्रतिशत) है, वे बृहद आपूर्ति आघातों के अधीन हैं - विशेषकर मानसून की अनिश्चितताओं को देखते हुए और इसलिए मौद्रिक नीति के दायरे के बाहर हैं। मुद्रास्फीति का लक्ष्य संधान करने वाला रिज़र्व बैंक आपूर्ति से चालित मुद्रास्फीति पर नियंत्रण के लिए अधिक कुछ नहीं कर सकता, सिवाय चरम अतिवादी परिस्थिति में सुरक्षात्मक उपाय करने के। .
- तीसरे, हम किस मुद्रास्फीति सूचकांक को लक्ष करते हैं? भारत में एक थोक मूल्य सूचकांक है ओर चार उपभोक्ता मूल्य सूचकांक हैं। तकनीकी स्तर पर इस बात के प्रयास चल रहे हैं कि उपभोक्ता मूल्य सूचकांकों की संख्या को घटाया जाये और मैं सोचता हूँ कि तकनीकी मुद्दे दुर्लंध्य नहीं हैं। लेकिन उसके बावजूद एक उभरती बाजार अर्थव्यवस्था में, जहाँ बाजार की अपूर्णताएं हैं, भौगोलिक वैविध्य है और 1.2 बिलियन लोग हैं, वहाँ एकल प्रतिनिधि मुद्रास्फीति दर प्राप्त नहीं हो पायेगी।
- चौथे, भारत में मौद्रिक संचरण तंत्र अनेक संरचनागत कारणों से बाधित है। मौद्रिक संचरण व्यवस्था के सुसंगत होने के बाद ही मुद्रास्फीति लक्ष्य संधान कार्यक्षम और प्रभावी हो सकता है।
- अंत में हमें अस्थिर पूंजी अन्तर्वाहों के कारण एकल लक्ष्य वाली मौद्रिक नीति के मार्ग में जो बाधाएं पैदा होती हैं उस वजह से हमें मौद्रिक स्थिति का प्रबंध करना है। पूंजी अन्तर्वाहों की धूम पर आधारित ढाँचे से विनमय दरों की गतिशीलता में भारी अव्यवस्था पैदा हो सकती है, जिससे मुद्रास्फीति लक्ष्य-संधान और वित्तीय स्थिरता दोनों कमजोर हो सकती हैं। अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं की तरह भारत को भी इस असंभाव्य त्रयी को लेकर हर संभव बेहतर तरीके से आगे बढ़ना होगा।

21. संकट के बाद 'नयी पर्यावरण परिकल्पना' में यह विचार जोर पकड़ रहा है कि विशुद्ध मुद्रास्फीति लक्ष्य संधान के के बजाय लचीला मुद्रास्फीति लक्ष्य संधान अधिक कार्यक्षम है। इस परिकल्पना के अनुसार यदि मुद्रास्फीति लक्ष्य से परे चली गयी है तो केंद्रीय बैंक का पहला कार्य उसे एक स्वीकार्य सीमा के भीतर लाना है और यदि मुद्रास्फीति सीमा के भतर है तो केंद्रीय बैंक अन्य उद्देश्यों पर ध्यान दे सकता है।

22. रिज़र्व बैंक का 1998 में अपनाया गया और उसके बाद परिष्कृत 'बहुविध संकेतक ढाँचा' वास्तव में मध्यम अवधि के लिए एक लचीली मुद्रास्फीति के उद्देश्यपरक ढाँचे को अपने भीतर समाहित करता है। इस ढांचे के अन्तर्गत जहाँ एक और हम प्रचलित समष्टि आर्थिक संदर्भ में बताये गये अनुसार प्रत्येक उद्देश्य के लिए निर्दिष्ट संबंधित भार के साथ बहुविध उद्देश्यों के बीच एक संतुलन लाने का प्रयत्न करते हैं, वहीं हमारा उद्देश्य एक मध्यम अवधि वाले मुद्रास्फीति लक्ष्य को प्राप्त करना है। इस संबंध में हमारी वचनबद्धता स्पष्ट रूप से हमारे अपने नीतिगत दस्तावेजों में परिभाषित है जहाँ हम कहते हैं कि हमारा उद्देश्य ''मध्यम अवधि में 3.0 प्रतिशत की मुद्रास्फीति के लक्ष्य के अनुरूप मुद्रास्फीति के अवबोध को 4.0 से 4.5 प्रतिशत के बीच बनाये रखना है जो कि भारत के वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ बृहद एकीकरण के समरूप है।'' यह स्वीकार करना होगा कि हमारी सम्प्रेषण रणनीति अभी अपने सर्वोत्तम रूप में अमल में नहीं लायी गयी है। हमें इस दिशा में कार्य करने की आवश्यकता है और वास्तव में हम तकनीकी और गैर-तकनीकी दोनों स्तरों पर जानकारी को बेहतर ढंग से प्रसारित करने के लिए कार्य कर रहे हैं। जानकारी के प्रसारण में हमें मुद्रास्फीति संबंधी अपने दृष्टिकोण को, विभिन्न उद्देश्यों के लिए निर्दिष्ट प्राथमिकताओं को, हमारी नीतिगत कार्रवाई से हम क्या प्रभाव पैदा करना चाहते हैं और इन कथित उद्देश्यों की दिशा में कैसे यह कारवाई हमें ले जायेगी इस सबको समझाने की आवश्यकता है।

मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच तालमेल

23. पिछले कुछ दशकों में विश्व भर में समष्टि आर्थिक प्रबंधन की एक बड़ी प्रवृति मौद्रिक नीति में राजकोषीय वर्चस्व को क्रमशः कम करते जाना है। भारत में भी यह प्रवृति रही है। राजकोषीय वर्चस्व का कम होते जाना एक निरन्तर प्रक्रिया है लेकिन दो अलग-अलग घटनाओं से इस दिशा में हुई महत्वपूर्ण प्रगति की पहचान होती है। पहली घटना अप्रैल 1997 से तदर्थ खजाना बिलों को पूरी तरह समाप्त कर देने के संबंध में रिज़र्व बैंक और सरकार के बीच हुआ एक समझौता है, यह एक ऐसा कदम था जिसकी वजह से सरकार के राजकोषीय घाटे के संबंध मं केंद्रीय बैंक द्वारा स्वचालित मुद्रीकरण की विचित्र प्रथा समाप्त हुई। दूसरा कदम राजकोषीय जवाबदेही तथा बजट प्रबंध (एफआरबीएम) अधिनियम को लागू करना था, जिसमें अन्य चीजों के साथ-साथ रिज़र्व बैंक को अप्रैल 2006 से प्राथमिक बाजार में सरकार के ऋण को वित्तापोषित करने से प्रतिबंधित किया गया। इन प्रवृतियों को 2004-08 के दौरान राजकोषीय सुदृढीकरण से और भी बढ़ावा मिला जिससे मौद्रिक नीति के लिए जगह उत्पन्न हुई। राजकोषीय वर्चस्व से क्रियात्मक स्वायत्तता की ओर मौद्रिक नीति का स्वस्थ संचरण संकट के प्रत्युत्तर के कारण प्रत्यावर्तित तो नहीं हुआ पर थम गया, क्योंकि इस संकट के कारण राजकोषीय विस्तार और उस उच्चतर राजकोषीय घाटे का मौद्रिक समायोजन आवश्यक हो गया था।

24. भारत में सरकार और रिज़र्व बैंक दोनों ने संकट की अवधि से बाहर निकलना शुरू कर दिया है। सरकार ने 2009-10 के राजकोषीय वर्ष में सकल देशी उत्पाद में 6.8 प्रतिशत के सकल राजकोषीय घाटे को 2010-11 में सकल देशी उत्पाद के 5.5 प्रतिशत तक कम कर देने का कार्यक्रम बनाया है। रिज़र्व बैंक ने क्षेत्र-विशिष्ट नकदी सुविधा को समाप्त कर, नकदी और चलनिधि आरक्षित अनुपातों और नीतिगत ब्याज दरों को उत्तरोत्तर बढ़ाते हुए संकट

के प्रत्युतर देने के लिए अपनाये अनुग्रहपरक रवैये को उलटना आरंभ कर दिया है। आगे भारत के लिए और वास्तव में प्रत्येक देश के लिए चुनौती यह है कि विस्तारमूलक नीतियों को सुसंगत तरीके से खोला जाये क्योंकि राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच असंगतियाँ आर्थिक दृष्टि से महंगी साबित हो सकती हैं।

25. जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, 2008-09 और 2009-10 के दो संकटपूर्ण वर्षों में सरकारी उधारों में तीव्रता से और आकस्मिक रूप से वृद्धि हुई थी। इसके बावजूद सरकार के ऋण-प्रबंधक रूप में रिज़र्व बैंक आसान चल नकदी स्थितियों को बनाये रखते हुए उधार कार्यक्रमों का प्रबंध कर सका। निश्चय ही, सरकारी प्रतिभूतियों पर प्रतिफल सुदृढ़ हुए, लेकिन अल्प स्तर पर। हालांकि इस वर्ष (2010-11) राजकोषीय घाटा सकल देशी उत्पाद के प्रतिशत के रूप में कम है, लेकिन सकल रूप से सरकारी उधारों की पूर्ण राशि न्यूनाधिक रूप से पिछले वर्ष के समान ही है। सच तो यह है कि सरकारी बांड की ताजी आपूर्ति के मापदंड से इस वर्ष उधार पिछले वर्ष से अधिक होगा और प्राप्तियों के प्रक्षेप-पथ को निर्धारित करने में यह अधिक प्रभाव डालेगा। इस बीच पिछले वर्ष से आर्थिक स्थितयाँ महत्वपूर्ण तरीके से परिवर्तित हुई हैं। प्रथम, मुद्रास्फीतिगत दबाव ज्यादा मजबूत हैं जो खुले बाजार परिचालनों के मार्फत चलनिधि को अनुप्रेरित करने के लचीलेपन को सीमित कर रहे हैं। दूसरे, पिछले वर्ष बैंकों ने बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के तहत बांडों की महत्वपूर्ण मात्रा को धारित किया था। ये बांड नकदी अन्तर्वाहों से उत्पन्न चलनिधि के प्रभाव को कम करने के लिए पहले जारी किए गए थे। प्रणालीगत चलनिधि को अनुप्रेरित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने इन बांडों की वापस-खरीद की। यह विकल्प इस वर्ष उपलब्ध नहीं था क्यांकि बचे हुए एमएसएस बांडों की मात्रा बहुत कम थी। और अंतिम व महत्वपूर्ण बात यह कि जैसे-जैसे स्थितियाँ सामान्य हो रही है, निजी क्षेत्र से ऋण मांग पुनः उभरने लगी है। लेकिन सरकारी प्रतिभूतियों से होनेवाली प्राप्तियों पर बढ़ता दबाव और उसके परिणामस्वरूप ब्याज दरों पर दबाव के कारण एक संभाव्य संभावना के लिए जगह नहीं बच पा रही है।

26. संकट से संबंधित घटनाओं को यदि छोड़ भी दें तो मौद्रिक नीति में 'राजकोषीय वर्चस्व' अब भी चिंता का विषय बना हुआ है। दीर्घावधि ब्याज दरें सरकारी प्रतिभूतियों पर होने वाली प्राप्तियों और इस तरह सरकारी उधार कार्यक्रम के आकार से गहरे प्रभावित हैं और इससे मौद्रिक संचरण की प्रभावोत्पादकता किसी हद तक क्षीण हुई है। इसलिए रिज़र्व बैंक के मुद्रास्फीति प्रबंधन की विश्वसनीयता सरकार के राजकोषीय सुदृढ़ीकरण की विश्वसनीयता पर महत्वपूर्ण रूप से आधारित है।

27. मुद्रास्फीति वाले आयाम के अलावा अन्य जरूरी कारणों से भी राजकोषीय सुदृढ़ीकरण बहुत महत्वपूर्ण है। राजकोषीय जवाबदेही के लिए संशोधित भावी-पथ पर 13 वें वित्त आयोग (टीएफसी) की सिफारिशों पर सरकार ने कार्रवाई शुरू कर दी है। इस पथ पर चलते हुए सरकार को दो सम्बद्ध उदेश्यों को भी ध्यान में रखना चाहिए। पहला तो यह कि राजकोषीय सुदृढ़ीकरण का जोर राजस्व बढ़ाने पर ही पूरी तरह निर्भर रहने की बजाय व्ययों की पुनर्संरचित करने पर होना चाहिए। सुदृढ़ीकरण प्रयासों का लक्ष्य यहाँ-वहाँ एक-एक मद को उठाने के बजाय आवर्ती किस्म की व्यय राशियों में कटौती करना होना चाहिए। दूसरे, मात्रात्मक संकेतकों को लक्ष्य बनाने के साथ यह भी महत्वपूर्ण हे कि राजकोषीय समायोजन की गुणवत्ता पर भी उतना ही ध्यान दिया जाये।

मौद्रिक नीति संचरण को सुधारना

28. केंद्रीय बैंकों का मानक उपकरण अल्पावधि ब्याज दर है जिसका उपयोग वे वित्तीय बाजारों में ब्याज दरों को प्रभावित करने के लिए करते हैं और इस प्रकार अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थितियों को परिचालित करते हैं। संकट के दौरान विश्व भर के केंद्रीय बैंकों ने नीतिगत दरों में बड़े

आक्रामक ढंग से कटौती की और बहुत सारी उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में दरें शून्य हैं या उसके आसपास हैं। तथापि, वित्तीय बाजार ने कोई प्रतिसाद देने से इन्कार कर दिया और जकड़बंदी में ही बने रहे जो कि मौद्रिक संचरण के लगभग समग्र रूप से धराशायी होने को दर्शाता है।

29. मौद्रिक संचरण की प्रभावोत्पादकता, अर्थात वह प्रक्रिया जिसके द्वारा केंद्रीय बैंक के नीतिगत संकेतक वित्तीय बाजारों को प्रभावित करते हैं, मूर्त और अमूर्त कारकों से चलती है। यह वित्तीय बाजारों की गहनता और कार्यकुशलता पर निर्भर होती है। यह वित्तीय प्रणाली में समग्र विश्वास और मनोभावों पर भी निर्भर करती है। प्रतिनिधिक रूप से उभरती अर्थव्यवस्थाओं में मौद्रिक संचरण धीमा होता है जो उथले वित्तीय बाजारों और अकुशल सूचना प्रणालियों को दर्शाता है।

30. भारत में मौद्रिक संचरण प्रणाली में सुधार होता रहा है पर उसे अभी पूरी तरह परिपक्व होना है। अनेक कारण है जो संचरण प्रक्रिया में अवरोध पैदा करते हैं। पहला तो यह कि भारत में सरकार प्रायोजित लघु बचत कार्यक्रम है जिनकी विशेषता नियंत्रित ब्याज दरें और कर रियायतें हैं। डाकघरों और फील्ड एजेंटों के एक विशाल नेटवर्क के माध्यम से परिचालित लघु बचत योजना की भीतरी इलाकों में बृहद और प्रभावशाली पैठ है, केंद्रीय बैंक की नीति दर के प्रत्युतर में बैंक जमाराशि की दरों को घटाने के बारे में प्रातिनिधिक रूप से सतर्क हैं क्योंकि उन्हें लघु बचत राशियों में अपने जमाराशि आधार के खो जाने का भय है। सरकार ने भी उनकी स्पर्धात्मक अग्रता की क्षतिपूर्ति के लिए नियमित आधार पर लघु बचत राशियों की दरों को समायोजित नहीं किया है।

31. दूसरे, जमाकर्ता को बैंकों से एक विषम संविदात्मक संबंध प्राप्त है। जब ब्याज दरें बढ़ती हैं तो जमाकर्ताओं को परिपक्वता अवधि से पहले अपनी जामराशियों को निकाल कर प्रचलित उच्चतर दरों पर उन्हें दोबारा जमा करने का विकल्प है। इसके विपरीत जब जमाराशि दरें गिरती हैं तो बैंकों को संविदा की विषमता के कारण जमाराशियों को निम्नतर दर पर पुनर्मूल्यित करने का विकल्प नहीं है। यह संरचनात्मक अपरिवर्तनीयता मौद्रिक संरचरण में बाधा डालती है। बैंक नीतिगत संकेतकों के प्रत्यत्तर में अपनी उधार देने संबंधी दरों को शीघ्रता से समायोजन करने में प्रातिनिधिक रूप से तब तक असमर्थ रहते हैं, जब तक कि अगले चक्र में अपनी जमाराशियों को पुनर्मुल्यित करते हुए लागत का समायोजन नहीं कर लेते। तीसरी और महत्वपूर्ण बात यह है कि विशाल सरकारी उधारों और अनकदी बांड बाजारों के कारण भी मौद्रिक संचरण बाधित होता है।

32. इस तरह का भी एक रूढ़िबद्ध दृष्टिकोण है कि अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं की तरह भारत में भी संकट की अवधि में मौद्रिक संचरण भंग हो गया था। यह सही नहीं है। मौद्रिक और बांड बाजारों को मौद्रिक नीति संकेतक पर्याप्त कुशलता के साथ संचरित किये गये थे। यह सच हे कि ऋण बाजार में मौद्रिक संचरण धीमा था लेकिन यह ऊपर उल्लिखित संरचनागत अपरिवर्तनीयता के कारण अधिक था, बनिस्वत कि वित्तीय बाजारों में संकट से जुड़ी किसी बाधा के कारण।

33. संकट के दौरान मौद्रिक संचरण का मूल्यांकन करते हुए इसे ध्यान में रखना होगा कि भारत में संचरित संकट की संक्रामकता मुख्यतया विश्वास मार्ग से आयी; वित्तीय बाजार अभाव के अवबोध से अधिक प्रभावित हुए, बजाय वास्तविक अभाव से। और, रिजर्व बैंक ने जब यह आश्वासन दिया कि वह प्रचुर मात्रा में चलनिधि को बनाये रखेगा तो बाजार की स्थितियों में उल्लेखनीय रूप से बहुत जल्दी सुधार हो गया और इससे बाजारों को व्यापक विश्वास भी प्राप्त हुआ। इस बात को समझना महत्वपूर्ण है कि भारत में संकट सम्पदा क्षेत्र से वित्तीय क्षेत्र को संचरित हुआ जबकि अग्रिम अर्थव्यवस्थाओं में यह संचरण वित्तीय क्षेत्र से सम्पदा क्षेत्र की ओर था। इसका अभिप्राय यह है कि ऋण प्रवाह में गिरावट, जैसा कि बैंकों ने दावा किया है, बैंकों की ओर से जोखिम उठाने में

किसी संकोच की वजह से नहीं, बल्कि निजी क्षेत्र से ऋण की मांग में आयी गिरावट की वजह से थी।

34. इसे समझ जाना चाहिए कि भारत में मौद्रिक संचरण में बाधा की बात को ऋण मूल्य की वर्तमान प्रणाली के कारण अतिशयोक्तिपूर्ण ढंग से कहा गया है। बैंकों को एक बेंचमार्क मूल उधार दर (बीपीएलआर) घोषित करनी होती है पर उन्हं अपने बीपीएलआर से निम्नतर दर पर उधार देने की भी छूट है। समय के साथ उप-बीपीएलआर उधार अपवाद नहीं, नियम बन गया है। वर्तमान में लगभग दो-तिहाई बैंक उधार बीपीएलआर से नीचे की दरों पर दिये जाते हैं। चूंकि बहुत सारी ब्याज दरें बीपीएलआर से सूचकांकित हैं, बैंक नीति दर परिवर्तनों के प्रत्युत्तर में अपनी बीपीएलआर में समायोजन के प्रति उदासीन हैं क्योंकि इन परिवर्तनों से ऋण का मूल्य निर्धारण करने के उनके विवेकाधीन लचीलेपन में कमी आती है। इसलिए मौद्रिक संचरण का मूल्यांकन करने में बीपीएलआर प्रणाली एक अपर्याप्त उपकरण बन गयी है।

35. यदि मूल्य स्थिरता के साथ वृद्धि के रिज़र्व बैंक के प्रयासों को प्रभावी बनाना है तो मौद्रिक संचरण में सुधार महत्वपूर्ण है। ऊपर बनायी गयी समस्याएं स्पष्ट समाधान सुझाती हैं। संकट के बाद शुरू किया एक महत्वपूर्ण सुधार बीपीएलआर प्रणाली के प्रतिस्थापन के रूप में एक नयी आधार दर प्रणाली (बीआर) को लागू करना रहा है, जो 1 जुलाई 2010 से प्रभावी होगी। प्रत्येक बैंक अपनी स्वयं की आधार दर निर्धारित कर सकेगा जिसमें वे सभी लागत तत्व दिखायी देंगे जो सभी उधारकर्ताओं के लिए सामान्य हैं। कोई बैंक उसके बाद अपने उधारकर्ताओं से आधार दर और उस पर एक प्रीमियम वसूल कर सकेगा, जो कि उस ग्राहक से जुड़े जोखिम को दर्शायेगा। इस प्रकार आधार दर सभी उधार दरों के लिए एक निम्नतम आधार बन सकेगी। वर्तमान में निर्यात ऋण और 200,000 रुपए तक के लघु ऋण पर उच्चतम ब्याज दर को हटा दिया गया है जिससे ऋण दरों का विनियंत्रण पूरा हो जाता है। नयी प्रणाली के पारदर्शी, न्यायपूर्ण और स्पर्धात्मक रहने की अपेक्षा है और इससे ऋण बाजारों में मौद्रिक संचरण में सुधार लाने में सहायता मिलेगी।

निष्कर्ष

36. अपनी टिप्पणियों में मैंने पाँच विशिष्ट मुद्दों के बारे में कहा है:

(i) पूंजी प्रवाह

(ii) विनिमय दर प्रबंध

(iii) मुद्रास्फीति लक्ष्य संधान

(iv) मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों में तालमेल

(v) मौद्रिक नीति संचरण में सुधार

37. मेरा प्रयत्न संकट से उत्पन्न कुछ मुद्दों को लेकर हमारी प्राथमिकताओं और नीतिगत दृष्टिकोण को स्पष्ट करना रहा है। इसका अर्थ यह नहीं कि सूची में हमारी और चुनौतियाँ और कार्य इतने ही हैं। और मैं इस बारे में मैं स्पष्ट हूँ कि चुनौतियों और कार्यों की फेहरिस्त काफी लंबी है।

38. यह कहकर अंतिम विचार मैं आपके लिए छोड़ता हूँ कि वे वृद्धि परिचालक जिनके कारण संकट पूर्व के वर्षों में भारत उच्च वृद्धि में सक्षम हो सका, वे सभी अक्षुण्ण हैं। सरकार और रिज़र्व बैंक के समक्ष चुनौती इस बात की है कि सुधारों के साथ आगे बढ़ा जाये और अर्थव्यवस्थाओं को एक ऐसे उच्चतर वृद्धि के पथ पर ले जाया जाये जो टिकाऊ हो और न्यायसंगत हो।